१२

अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत

तपपूर्ति प्रकाशन

कार्यकर्ता

श्री. दत्तोपंत ठेंगडी
का
प्रासंगिक भाषण

अ. भा. कार्यकर्ता सम्मेलन

दि. २० से २२ सितम्बर १९८६

कार्यकर्ता

श्री. दत्तोपंत ठेंगडी

का

प्रासंगिक भाषण

A. B. Grahak Panchayat – Publication

(तपपूर्ति प्रकाशन – अ. भा. ग्राहक पंचायत सम्मेलन समिती १९८६)

मूल्य रु. ६ /-

Price Rs. 6 /-

Publisher –
Akhila Bharatiya
Grahak Panchayat
Sammelan Samiti
'Shrama-shree' Ruikarpath
Mahal, Nagpur-440 002.

Printed at –
Shri Sai Mudranalaya
New Shukrawari Rd.
Mahal, Nagpur-2.

प्रस्तावना

मा. दत्तोपंतजी ठेंगडी द्वारा श्रमिक-आंदोलन में कार्यरत कार्यकर्ताओंके सम्मुख श्रमिकोंको ग्राहकहित के विषय में जो भी उद्‌बोधन किया, वह हमें ग्राहक आंदोलन के लिये भी प्रेरणा का मूलस्रोतसा सिद्ध हुआ ।

ग्राहक आंदोलन का ढांचा कैसा हो इसविषय में मा. दत्तोपंतजीने अ. भा. ग्राहक पंचायत के प्रमुख कार्यकर्ताओं को भी मार्गदर्शन किया है । १२ साल के तपपूर्ति के पश्चात् नागपुर में सितम्बर २०, २१, २२ को अ. भा. ग्राहक पंचायत का जो सम्मेलन होने जा रहा है, उस अवसर पर कार्यकर्ताओं के अध्ययनार्थ कुछ सामग्री उपलब्ध कराने की दृष्टि से विचार करते समय हमें मा. श्री. ठेंगडीजी द्वारा दिये गये कुछ भाषण प्राप्त हुए, जिस से ग्राहक आंदोलन के कार्यकर्ताओंको योग्य मार्गदर्शन प्राप्त हो सकेगा, यह विश्वास निर्माण हुआ । यह पुस्तिका प्रकाशन का यही हेतु है । आशा है अ. भा. ग्राहक पंचायत के कार्यकर्ता इस उपक्रम का स्वागत करेंगे ।

श्रीगणेश चतुर्थी
भाद्रपद शु. ४, शके १९०८

बापू महाशब्दे
कार्यालय प्रमुख
अ. भा. ग्राहक पंचायत
नागपुर.

R

कार्यकर्ता

मुहम्मद पैगंबर : एक कुशल संघटक-

अपने देश में और देश के बाहर भी कुछ लोग ऐसे हुऐ हैं जिन्हें इतिहास में कुशल संघटक कहा गया हैं। ऐसे लोगों में एक नाम मुहम्मद पैगंबर साहब का भी आता हैं। उनके जीवन की एक घटना हैं। उनके यहाँ भी परिवार में असंतोष रहता था। असंतोष का कारण उनका अपने लिये कुछ भी एकत्रित कर नहीं रखने का स्वभाव था। जब कभी लड़ाई हो जाती थी, जीत भी हो जाती थी। जो संपत्ती मिलती थी, उसे सरदार आपस में बाँट लेते थे। मुहम्मद साहब उसमें अपना हिस्सा कुछ नहीं लेते थे। इस कारण वे गरीब थे। उनके सरदार उनकी तुलना में धनी थे। गरीबी इतनी थी कि रात के समय दीया भी नहीं जला सकते थे इसलिये ऐसा ही भोजन रखते थे जो अंधेरे में किया जा सके। जैसे खजुर है। ऐसी कोई बातें थीं। इनके कारण परिवारों में असंतोष था। बाद में उनके जीवन की सबसे बड़ी पहली यशस्वी लड़ाई हुई, बॅटल ऑफ बद्र (Battle of Badr) कहा जाता हैं। इस लड़ाई में विजय प्राप्त हुई और लूट भी काफी प्राप्त हुई। उसे देखकर उनकी पत्नियों में चर्चा हुई कि हमेशा ये अपना हिस्सा नहीं ले रहे हैं : लेकिन कम से कम अब तो एक बार उनको कहा जाय कि कम से कम एक बार तो वह अपना हिस्सा ले। माने हम लोगों को पारिवारिक सुविधा होगी। इसलिये उनकी जो सबसे प्रिय पत्नी आयेशा थी उसके नेतृत्व में उनकी पत्नियाँ उनसे मिलीं, और उनसे कहा कि इस बार आप अपना हिस्सा लूट में से ले लीजिये। तो मुहम्मद साहब ने कहा कि एक हिस्सा लेने की क्या बात हैं? जितनी संपत्ती है, वह सारी मैं अपने पास रख लूँ तो भी कोई आपत्ति उठाने वाला नहीं। मैं अपना हिस्सा ले लेता हूँ।

पूरी संपत्ती ले लेता हूँ। आपके जिम्मे दे देता हूँ। आप आपस में बँटवारा कर सकती हैं। केवल एक शर्त है, कि एक बार मैंने यह सारी संपत्ती उठा ली, आपको दे दी, आपने आपस में बाँट ली, तो उसके बाद "पैगंबर की मैं पत्नी हूँ" ऐसा कहने का अधिकार आप में से किसी को भी नहीं रहेगा। जैसे ही यह कहा, तो वे सब असमजस में आ गयी। थोडा विचार किया, और कहा, कि 'नहीं। हमें संपत्ति नहीं चाहिये। हम हमारी जो माँग थी वह वापिस लेते हैं।' अब यह छोटासा उदाहरण जिन्हें संघटन करना है, बड़ा काम करना है, उसके लिये विचार की अच्छी प्रेरणा दे सकता है।

बडप्पन: एक अन्तर्गत मूल्य-

संसार में अलग अलग तरह के जीवनमूल्य हैं, और उनमें से कार्यकर्ताओं को अपने लिये कौनसा जीवनमूल्य स्वीकार करना चाहिये यह एक सोचने की बात है। हमेशा ही सोचने की बात है। आज की ही बात नहीं। लेकिन आज की परिस्थिति में तो विशेष रुप से है, क्योंकि आज हमारे सार्वजनिक जीवन में कुछ अलग प्रकार के मापदंड ही प्रभावी हैं। विशेष रूप से राजनैतिक क्षेत्र में इस बात की होड़ लगी है कि ज्यादा से ज्यादा ऊँचा ओहदा कौन प्राप्त कर सकता है? बडी पोजिशन कौन प्राप्त कर सकता है? और चालाकी करते हुए कई प्रकार के ऊँचे नीचे हथकण्डे अपनाते हुए, जो ऊँचा पद, ज्यादा संपत्ति प्राप्त करेगा, उसी को आज कल व्यवहार चतुर माना जाता है। किन्तु ऐसा दिखता है कि जिन्होंने कुछ काम खड़ा करके दिखाया, उन पर एक अलग प्रकार का पागलपन ही सवार था। उनके अंदर यह व्यवहार चातुर्य नहीं था। व्यवहार चतुर कहे जाने वाले लोगों के अपने मापदण्ड हैं, उसी प्रकार जिन पर पागलपन सवार होता है उनके भी जीवनमूल्य हैं। दुनिया जिसे पागलपन कहती है उसे लेकर जो काम कर रहे हैं, वे बड़प्पन को, जीवन की सार्थकता को दूसरे ढंग से देखते हैं। नेपोलियन जब आदर्शवाद खो बैठे, पोजिशन के पीछे लगे और

फलस्वरूप उनकी विचार पद्धति में परिवर्तन हुआ, तो उन्होंने एक बात कहीं जो बहुत प्रसिद्ध है । और शायद उसीका अनुकरण आज हमारे सार्वजनिक क्षेत्र में हो रहा है । उन्होंने कहा कि, "Men are like Figures. They are valued according to the Position they occupy." याने जो व्यक्ति हैं वह आँकडों के समान है । कौनसी पोजिशन वह आक्युपाय करते हैं इस पर उनका बडप्पन, greatness, अवलंबित है । और उन्होंने उदाहरण दिया 1 1 1 1 का । 1 1 1 1 में चार बार 1 आता है लेकिन हर एक का मूल्य अलग अलग है । आखिर में जो आता है उसका मूल्य एक है । Last but one का दस है । उसके पीछे जो है उसका सौ है । उसके पीछे है उसका हजार । तो intrinsic worth जो है वह सबकी एक ही है । लेकिन पोजिशन के बदल जाते ही एक की पोजिशन एक एक की कीमत दस, एक की कीमत सौ, एक की कीमत हजार हो गयी । तो उन्होंने कहा कि एक ही व्यक्ति ऊँचे पोजिशन पर जाएगा तो उसका बडप्पन बढेगा । हमारे यहाँ उलटा कहा गया है । हमारे यहाँ कहा गया है कि प्रासादशिखरस्थोऽपि काको न गरुडायते । गरुड है और कौवा है । अब गरुड ज़मीन पर बैठा या पेड़ पर बैठा है, और कौवा राजप्रासाद के शिखर पर जाकर बैठा है । तो भी हमारे यहाँ कहा गया कि, राजप्रासाद के शिखर पर बैठा कौवा कौवा ही रहेगा, वह गरूड नहीं बन सकता । तो केवल पोजिशन के आधार पर बडप्पन नहीं । बडप्पन एक intrinsic worth है, अंतर्गत मूल्य है । ऐसी धारणा अपने यहाँ रही । अब ये दो अलग अलग विचार के ढंग हैं । इसके कारण दो अलग आचार, व्यवहार हम इतिहास में देखते हैं । अब अपने यहाँ पिछले दिनों में कुर्सी की लड़ाई कितनी चली, आप सब लोग जानते हैं । बड़प्पन का अर्थ ही जिन्होंने "कुर्सी" लगाया उन्होंने कुर्सी से चिपके रहने में अपने जीवन की सार्थकता आँकी । लेकिन यदि हम इतिहास के कुछ उदाहरण देखें तो सर्व इसके विपरीत नजर आता है ।

जॉर्ज वॉशिंग्टन का एक उदाहरण--

आज जो देश दुनिया के संपन्न राष्ट्र के नाते गिने जाते हैं उनमें एक है अमरीका । अमरीका के founding fathers में बडा स्थान जॉर्ज

वॉशिंग्टन का रहा है । उनके जीवन में एक घटना ऐसी आती है कि अमरीका का स्वातंत्र्य संग्राम अंग्रेजों के खिलाफ वॉशिंग्टन के नेतृत्व में लगभग समाप्त होता आया था । अब वॉशिंग्टन लड़ाई जीत जाएँगे यह दिखता था । जैसे इधर लड़ाई जीतने की संभावना दिखने लगी, वैसे राजनैतिक सूत्र संचालकों के मन में एक ईर्ष्या यानी जलन पैदा हुई । उन्होंने सोचा कि, अरे ! हमने इसको कमांडर-इन-चीफ के नाते नियुक्त किया; लेकिन आज जनता के सामने हमारा नाम तो नहीं आ रहा, इसीका नाम आ रहा है । कहीं यही बाजी न मार ले जाय । आगे चल कर इसीके हाथ में सत्ता न चली जाय । तो इसकी Popularity कम करने के लिये क्या किया जाय ? इस दृष्टि से छोटा मन रखते हुए उन्होंने वॉशिंग्टन के युद्ध प्रयत्नों को Sabotage करना शुरू किया । वास्तव में देश का स्वातंत्र्य संग्राम है, जितना जल्दी और अच्छी तरह से समाप्त हो सकता है उतना करना चाहिये । यह बड़ा विचार उन्होंने नहीं किया । तो इसकी Popularity न बढे इस दृष्टिसे Sabotage ढंग क्या था ? तो सिपाहियों के लिये जो सामान मँगवाया जाता था, जूते हैं, कपडे हैं, अनाज हैं--तो यह सामान भेजने में देर करना । देर हो जाएगी तो फिर लड़ाई जीत में भी देर होगी । इसके खिलाफ सिपाहियों में असंतोष भी होगा । उन्होंने इस तरह से सप्लाई में देर करना शुरू किया । किंतु सिपाहियों को यह खबर लग गयी कि राजनैतिक नेता यह गंदा काम कर रहा हैं । घोर असंतोष सेना में हुआ । उनके नेताओं ने आपस में कुछ चर्चा की और वे वॉशिंग्टन के पास पहुँचे । वॉशिंग्टन से कहा कि ये जो राजनैतिक नेता हैं, बडे गंदे लोग हैं । देश की चिंता नहीं । अपनी व्यक्तिगत पोजिशन का विचार कर रहे हैं । अब लड़ाई तो समाप्त होने वाली हैं । हम जीतने वाले हैं । लेकिन क्या लड़ाई समाप्त होने के बाद इनके हाथ में हम देश का कारोबार सौप देंगे ? ऐसे गद्दार लोगोंके हाथमें क्या बागडोर देंगे ? यह अच्छा नहीं होगा । तो जैसे ही लड़ाई समाप्त हो जाएगी आप, देश का कारोबार हाथ में ले लीजिए । आज देश में सेना के अलावा दुसरा कोई भी शक्ति केंद्र,

Power Centre नहीं हैं । आपने यदि सोचा तो आपका विरोध करने के लिये कोई भी खडा नहीं हो सकता । आप सारी सत्ता हाथ में ले लीजिए हम आपके साथ हैं । सेना आपके साथ है । ऐसा उन्होंने कहा । अब कितना अच्छा मौका था ! वास्तवमें उस समय अमरीकामें दुसरा कोई शक्ति केन्द्र --Rival Power Centre नहीं था । किन्तु वॉशिंग्टन नें कहा कि, "नहीं ऐसा नहीं । ये अपने सिद्धांत के अनुकूल बात नहीं होगी ।" उन्होंने उस सुझाव को अमान्य कर दिया और आगे चलकर एक Constitution Commitee एपाइण्ट की । बाकायदा चुनाव कराया । अब यह बात अलग है कि उन चुनावों में प्रेसिडेंट के नाते First President वॉशिंग्टन को जनता नें चुन लिया, लेकिन चुनाव का झंझट न करते हुए सीधे हाथ में सत्ता लेनें का एक मौका था । यह मौका उन्होंने स्वयं छोड दिया । आज जो हमारे सार्वजनिक क्षेत्र में जीवनमूल्य हैं उनको देखा, तो यह एक पागलपन की ही बात उन्होंने की, ऐसा कहना होगा । जिन्होंने कुछ बड़ा काम किया है ऐसे लोगों के जीवन में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जो आज के हमारे सार्वजनिक जीवन में पागलपन जैसे लग सकते हैं ।

जोसेफ मैजिनी-

इटली का बड़ा अच्छा उदाहरण इस दृष्टिसे हमारे सामने है । इटली ऑस्ट्रियन साम्राज्य के अन्दर था । उस समय लोगों में इटालियन राष्ट्रीयत्व की भावना जागृत करना, जागृत लोगों का संगठन करना साम्राज्य के खिलाफ लडने के लिये लोगों को प्रवृत्त करना यह सारा काम, जोसेफ मैंजिनी ने किया । उसको 'इटली का राष्ट्रपिता' कहा जाता है । तो सारा संगठन उन्होंने खडा किया । जागृति उन्होंने की । लेकिन फिर मौका ऐसा आया कि प्रत्यक्ष लड़ाई ऑस्ट्रिया के साथ करने की स्थिति पैदा हो गई । यह लड़ाई का जब मौका आया तब उन्होंने सब साथियों से कहा कि "ठीक है कि मैं आपका नेता हूँ, ऐसा आप मानते हैं । लेकिन अब जो मौका वह लड़ाई का है । इस समय नेता के नाते ऐसा ही व्यक्ति होना चाहिये जो लड़ाई का तंत्र जानता हो । मैं वह तंत्र

नहीं जानता हूँ। और कुछ काम मैं अच्छी तरह से कर सकता हूँ। लेकिन लड़ाई का जो तंत्र है वह मैं नहीं जानता। वह तो गॅरिबाल्डी जानता है। तो हम सबको गॅरिबाल्डी को इस समय अपना नेता इस नाते स्वीकार करने चाहिये।"

गॅरिबॉल्डी-

इतना ही नहीं, जिस गॅरिबॉल्डी को इतनी लोकप्रियता उस समय प्राप्त नहीं थी, उसको अपना नेता बनाया और स्वयं गणवेष पहनकर, हाथ में राइफिल लेकर, एक सिपाही के नाते गॅरिबॉल्डी के कमांड के अंडर जोसेफ मॅझिनी खडे हो गये। क्या, हम कल्पना कर सकते हैं कि हमारी आज की जो सायकॉलॉजी सार्वजनिक जीवन की है, उसमें आज का कोई नेता इस तरह का व्यवहार कर सकता है ? गॅरिबाल्डी ने लड़ाई की। शत्रु को परास्त किया। रोम को जीत लिया रोम में विजय-प्रवेश किया। जैसे पहले से तय हुआ था, पिडमांट के (Pidmant) विक्टर इमॅन्युअल को गद्दीपर बिठाया, राज्याभिषेक कराया। और राज्याभिषेक के पश्चात् अब नई सरकार कैसी बनाना इसकी जब चर्चा चली, तो गॅरिबाल्डीने कहा कि मैं छुट्टी माँगने को आया हूँ। विक्टर इमॅन्युअल को बड़ा आश्चर्य हुआ, कि जितनी विजय हुई है, वह सारी इसके कारण हुई है, और यह कह रहा है कि मैं तो घर जा रहा हूँ। गॅरिबाल्डीने कहा, कि "यह आप ठीक कहते हैं कि अब तक का काम था वह लड़ाई का काम था। वह मैं जानता था। इसलिये मैंने किया। इसके पश्चात् जो काम आने वाला है वह राजनीति का काम है। कूटनीति का डिप्लोमसी (Diplomacy) का काम है। उसमें मेरी गति नहीं। उस दृष्टिसे इटली का नेतृत्व अब आपके जो प्रधानमंत्री 'कैहुर' हैं, वे ही कर सकते हैं आप उनके हाथ में शासन की बागडोर दे दीजिये। मैं अपने गाँव कॅपरी में खेती करने के लिये (उनकी कॅप्री नाम एक छोटासा द्वीप था, वहाँ खेती थी) जाता हूँ। मुझे छुट्टी दे दीजिये।" उन्होंनेछुट्टी ली और खेती पर चले भी गये। याने सारी विजय इन्होंने

संपादन की । परंतु देश के व्यापक हित में आगे की जिम्मेदारी के लिये कहा कि, अभी जिन गुणों की आवश्यकता है वे गुण अलग हैं । वे मेरे अन्दर नहीं । दुसरों के अन्दर है । उनको नेता बना दीजिये । और स्वयं निर्मोह अपने गाँव वापिस चले गये ।

जीवनमूल्यों की आराधना हमारी परम्परा-

क्या हम ऐसी कल्पना कर सकते हैं कि हमारे देश में आज यह हो सकता है ? मैं 'आज' इस शब्द का प्रयोग इसलिये कर रहा हूँ कि हमारा सारा इतिहास आज जैसा नहीं रहा है । वास्तव में श्रेष्ठतम जीवनमूल्यों की आराधना की हमारी परम्परा है । कितने ही उदाहरण हैं । उदाहरण के लिये एक प्रसंग बताते हैं । पांडव बनबास में थे । माता कुन्ती के हाथ से कुछ अच्छा काम हुआ होगा । भगवान प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा कि वर माँग लो । वस्तुत: इनके सामने पहला सवाल यही था कि राज्य कैसे प्राप्त हो सकता है । स्वाभाविक ही कुन्ती चाहती ती सीधे वरदान माँग लेती । लेकिन जो उन्होंने माँगा वह बड़ा आश्चर्यजनक था । उन्होंने कहा कि, विपद: सन्तु न: शश्वद् यासु संकीर्तनें हरि: । हमारे ऊपर हमेशा आपत्तियाँ रहे । ताकि तुम्हारा स्मरण हमें हमेशा होता रहे । जब राज्य प्राप्त करने के चक्कर में सब पड़े हुए हैं, उस समय इस तरह का वरदान माँगना और जब युद्ध समाप्त हुआ, जीत हुई, राज्य प्राप्त हुआ, तो उस समय की घटना बताते है कि धृतराष्ट्र वनवास में जाने के लिये निकले । पांडवों ने रुकने के लिये कहा, लेकिन उन्होंने माना नहीं । उन्होंने कहा कि अब मैं भी वनवासमें जाऊँगा । उनके साथ जाने के लिये कुन्ती भी तैयार हुई । तो पांडवों ने कहा कि, "माँ, तुमने आग्रह किया इसलिये हमने यह लड़ा । अब राज्य प्राप्त होने के पश्चात् तुम जा रही हो ।" तो कुन्ती माता ने कहा कि, मैंने राज्य प्राप्त करने का तुमको आदेश दिया वह इसलिये नहीं कि, हम लोग राज्य का उपभोग करें, बल्कि इसलिये कि तुम क्षत्रिय हो । तुम्हारा कर्तव्य है अन्याय का प्रतिकार करना । धर्मपालन के लिये राज्यप्राप्ति आवश्यक

थी । वह मैंने तुम्हें बताया । अब धर्म का आदेश मुझे है कि, जब मेरे ज्येष्ठ वनवास जाने के लिये निकलेंगे, तो उनकी सेवा में मैं भी वनवास ही स्विकार कर लूं । मेरा धर्म मुझे यही बताता है । इसलिये मैं अभी वनवास जा रही हूँ ।

याने सारा प्रयास करते हुए राज्य प्राप्त करने के बाद जंगल में जाने की बात सोचना यह एक आदर्शवादी जीवनमूल्य उनके जीवन में हमें दिखाई देता है ।

लोकमान्य तिलकजी का उदाहरण–

पुराने इतिहास में ऐसे कई उदाहरण हैं । भरत का है, चाणक्य है । कितने ही उदाहरण है । किंतु कोई सोचेगा कि ये केवल पुराने उदाहरण है हमारे नये इतिहास में ऐसे उदाहरण नहीं, सो नहीं । यह जो स्वयं अपनी ओर से नेतृत्व छोड़ने की बात है । उसकी अभी अभी के इतिहास में कुछ घटनाएँ मिलती है । लोकमान्य तिलकजी १९१६ के पश्चात् एक तरह से संपूर्ण देश के नेता थे । सब लोग उन्हीं को मानते थे । और उस समय महात्माजी दक्षिण आफ्रिका से हिंदुस्थान में आये । दक्षिण आफ्रिका में उन्होंने जो सत्याग्रह किया था उसकी बडी चर्चा थी । और शांतिपूर्ण असहयोग का जो उनका प्रयोग है वह प्रयोग काँग्रेस ने भी करके देखना चाहिये, यह एक विचार काँग्रेस के लोगों के मन में आ रहा था । तिलकजी ने जब देखा कि शायद काँग्रेस इस तरह का आंदोलन छेडने का विचार कर सकती हैं, तो उन्होंने गांधीजी से कहा कि ठीक है, ये लोग मेरा मानते हैं । मैं नेता हूँ । किन्तु यदि यही निर्णय हुआ कि आपके ढंग से आंदोलन चलाना, तो इसका जो तंत्र है, वह मैं नहीं जानता, आप जानते हैं । तो उसका नेतृत्व आपको करना होगा । ऐसा तिलकजी ने कहा । यह बात ठीक हैं कि उसके बाद उनकी मृत्यु हुई । किन्तु उनकी बात से यह स्पष्ट होता है कि यदि उनकी मृत्यु न हुई होती, तो एक सिपाही के नाते वह गांधीजी के नेतृत्व में खडे होने की मानसिक तैयारी रखते थे ।

महात्मा गांधीजी-

गांधीजी के भी जीवन में ऐसा उदाहरण आता हैं। जो आज के राजनैतिक वायुमंडल के परिप्रेक्ष्य में बड़ा उद्‌बोधक हैं। १९२४ में बेलगाँव काँग्रेस की उन्होंने अध्यक्षता की। जीवन में एक ही बार यह बड़ा सम्मान उन्होंने ले लिया। उस समय चर्चा चल रही थी कि, कौंसिल में जाना या नहीं जाना। गांधीजी इस मत के थे कि नहीं जाना चाहिये। और जो इस मत के थे कि जाना चाहिये, उन्होंने एक अलग काँग्रेस के अंतर्गत, ग्रूप तैयार किया था, जिसका नाम था 'स्वराज्य पार्टी'। स्वराज्य पार्टी का नेतृत्व बॅ. चित्तरंजन दास, मोतीलाल नेहरु आदि कर रहे थे। ऑल इंडिया काँग्रेस कमिटी की जब मीटिंग हुई तो उस समय गांधीजीका विचार बहुमतमें था। छह महिनों तक गांधीजी ने जब दौरा किया, लोगों के साथ बातचीत की, तो उनको दिखाई दिया कि यद्यपि काँग्रेस सेशन के समय उनका विचार बहुमत में था, तो भी धीरे धीरे लोगों की वृत्ति में परिवर्तन आ रहा था। और अब लोगों को ऐसा लग रहा है कि कौंसिल में एक बार जाकर देखना ही चाहिये कि उसका भी उपयोग क्या हो सकता है ? अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी के सदस्यों के मन में यह विचार-परिवर्तन आ रहा है, इस बात का पता और किसी को नहीं था। क्योंकि अलग अलग लोग अपने अपने स्थान पर विचार कर रहे थे। स्वराज्य पार्टी के लोगों को भी इस बात का पता नहीं था, लेकिन गांधीजी को पता जरूर था। यह पता होने के पश्चात् उन्हें लगा कि, मेरा कुछ नैतिक कर्तव्य है। तो जुलाई महिने में उन्होंने स्वराज्य पार्टी के उस समय के जो नेता थे--क्योंकि चित्तरंजनदास की तो मृत्यु हो चुकी थी--मोतीलालजी नेहरु--उनको एक पत्र लिखा और उस पत्र में कहा कि आप शायद जानते नहीं कि A. I. C. C. में उस समय तो मेरा बहुमत था लेकिन अब मेरा बहुमत नहीं रहा। अब वह बहुमत आपके ही विचार को पसंद कर रहा है। इस दृष्टि से मैं त्यागपत्र दें रहा हूँ। आप काँग्रेस की अध्यक्षता स्वीकार कर लीजिये। इस तरह का एक पत्र महात्माजी ने लिखा। याने जनता को

भी मालूम नहीं था, कि विचार परिवर्तन हुआ हैं । स्वराज्य पार्टी को और मोतीलालजी को भी पता नहीं था कि वास्तव में उनका बहुमत हो रहा है । केवल गांधी को ही पता था । किंतु पता चलने के बाद स्वयं होकर (और उन दिनों काँग्रेस का अध्यक्ष पद सार्वजनिक क्षेत्र में उतना ही महत्त्वपूर्ण माना जाता था जितनी Prime Ministership आज मानी जाती है ।) इतना महत्त्वपूर्ण पद छोड़ना इसकी कल्पना करना आज के जीवन में कुछ कठिन हो जाता है ।

'नेताजी' का व्यवहार कैसा हो ?

ऐसा लगता है कि, आदर्शवादी जीवनमूल्य जिनके हैं, वे अलग से, सोचते हैं । और केवल व्यक्तिवादी 'Personal ambition' मेरा बड़प्पन, मेरा गौरव, मेरा नाम, ऐसा जिनका विचार है कि वे कुछ अलग ढंग से चलते हैं । हम लोग सामूहिक नेतृत्व के नाते जब यहाँ इकट्ठा हुए है, तो जीवनमूल्य हमारे क्या होने चाहिये ? और उसके मुताबिक हमारा व्यवहार क्या होना चाहिये, सोचने का ढंग क्या होना चाहिये इसके बारे में बारीकी से सोचें यह आवश्यक हो जाता है । हम सब मिलकर ही सामूहिक नेतृत्व करनेवाले हैं हमारे नेतृत्व की जो quality रहेगी उसका असर हमारे क्षेत्र पर और देश पर होने वाला है । हमारे सोचनें का ढंग क्या रहे ? विचार का ढंग क्या रहे ? भावना हमारी कैसी रहे ? इसका बहुत महत्त्व है । आज हम 'नेतृत्व' के बारे में जब सोचते हैं तो राजनैतिक क्षेत्र में 'नेताजी' शब्द बड़ा प्रचलित हो गया है । कई लोगों को 'नेताजी' यह उपाधि प्राप्त हो गई है सुभाषचन्द्र बोस को यह उपाधि प्राप्त करने के लिये आत्म बलिदान करना पडा आज वैसा कुछ करने की आवश्यकता नहीं हैं । आप आसानी से नेताजी बन सकते हैं । और जब नेताजी बन सकते हैं, तो नेता का व्यवहार कैसा रहना चाहिये यह भी एक Pattern आज तय हुआ है ।

हम क्या कम है ?

हरएक व्यक्ति नेता बनने की कोशिश कर रहा है । और नेता का व्यवहार कैसा होना चाहिये यह Pattern भी तय हो चुका है । नेता याने वह है जो कमांड (Command) करता है । लोगों को आदेश देता है । स्वयं काम नहीं करेगा । लोगों को आदेश देगा । मीटिंग है तो दरिया उठाने का काम नहीं करेगा । भाषण देने के लिये आएगा । एक Pattern लोगों का तय हुआ है । बाहर निकलेगा । सीना तानकर, गर्दन ऊँची करते हुए किसी ने प्रणाम किया तो उसको पूरा प्रणाम नहीं करेगा । यों गर्दन झुका कर प्रणाम का स्वीकार करेगा । याने 'मैं' कुछ हूँ । मैं कम नहीं हूँ । मैं तुम्हारा नेता हूँ । यह Complex लेकर चलने वाले नेताओं की बडी फसल आज हिंदुस्थान में आ रही है । नये नये लोग भी जो राजनीति में प्रवेश कर रहे हैं । उनके ऊपर यह संस्कार नहीं है कि देश की सेवा करनी है । उनके ऊपर यही संस्कार है कि यह जो बुढ्ढे लोग है, उनके अंदर कौनसी Qualifications हैं ? हम क्या कम है ? यही संस्कार उनके ऊपर हो रहा है । अब ऐसे वायुमंडल में हमारा व्यवहार हमारा विचार और भावना का ढंग यदि 'नेताजी' का ही रहा तो क्या हम कोई बड़ा काम कर सकेंगे ? आज के नेता कहलाने वाले लोगों का व्यवहार ज़रा देखिये । और जिनके आदर्शवादी जीवनमूल्य थे, इस तरह के लोगों के व्यवहार के साथ जरा तुलना कीजिये, इसका थोडासा दर्शन लीजिये । दिखेगा कि व्यवहार बिलकुल अलग ढंग का था, जो; आज के नेताओ के व्यवहार से मेल नहीं खाता ।

इसके पूर्व तो कार्यकर्ता छोटा छोटा काम करते थे । वोटर्स का नाम लिखना और चिठियाँ बाँटना, दरिया उठाना, कुर्सियाँ उठाना । इस समय तो ऐसा है कि जो कार्यकर्ता के नाते आते हैं वह नेता बन जाते हैं । General Management and Supervision सभी को प्रिय है । जो प्रत्यक्ष फील्ड वर्क है, छोटा दिखने वाला काम है, वह कौन करेगा, इसकी फिक्र नहीं । तो हमने कहा कि भाई, आपने जो बीज बोयें हैं उसीका यह

फल है । लेकिन आदर्शवादी जीवनमूल्य रखने वाले लोगों का व्यवहार, उनके जीवन की छोटी छोटी घटनाओं से हमारे सामने किस तरह आता है । मैंने तिलकजी का उदाहरण दिया । तो एक बिलकुल छोटी घटना उनके जीवन में ऐसी बताई जाती है, कि १९१६ लखनऊ में काँग्रेस थी । अब महाराष्ट्र और दक्षिण से भी उसमें प्रतिनिधी आये थे । चर्चा चल रही थी । रात में बडी देरी से सो गये । लेकिन सुबह हुई और लोग प्रातःविधी हाथमुंह धोने आदि के लिये निकले, तो उन्होंने देखा कि तिलकजी पानी गरम करने की दौड़धूप में लगे हैं । बडे बडे बर्तन पानी गरम करने के लिये थे । तिलकजी चुल्हा जला रहे थे । लोगों नें उनसे पूछा कि आप क्यों चूल्हा फूंक रहे है ? तिलकजी नें कहा भाई, लखनऊ के लोग शायद इस बात को समझ नहीं पायेंगे कि जो प्रतिनिधी दक्षिण प्रदेशों से यहाँ आये है वे इस सर्दी को सह नहीं सकेंगे । उत्तर का जाड़ा उन्हें बरदाश्त नहीं होता । नहा – धोकर बैठक में जल्दी पहुँचना है । इसलिये पानी गरम कर रहा हूँ । आज के नेता क्या व्यवस्था संबंधी इतनी चिन्ता कर सकते हैं ? छोटी छोटी बातों की ओर स्वयं परिश्रम करने का इतना ध्यान रखना । क्या उन्हें जम सकेगा । नेताजी तो जोड़ तोड़ में इतने फँसे है कि, ये बाते उनके लिये निरर्थक हैं ।

गांधीजी के जीवन में आता है कि उनका एक अनुयायी था । अच्छा विद्वान शास्त्री पंडित था । उसे कोड़ हो गयी । गांधीजी ने उसको अपने पास आश्रम में रहने बुलाया । स्वयं कुष्ठरोग से संबंधित साहित्य भी पढ़ना शुरू किया । उसमें एक बात आयी कि Olive oil का मालिश करने से कोड कुछ कम हो सकती है । अब मालिश करने का काम गांधी-जीने स्वयं अपने पास लिया । हर तीसरे दिन उसका मालिश वे करते थे । उस समय सत्ता के हस्तान्तरण की चर्चा अंग्रेजों के साथ शुरू हुई थी । दिल्ली में लॉर्ड मौन्ट बॅटन के साथ चर्चा करने के लिये गाँधीजी आये थे । उस अनुयायी का मालिश करने का टाइम टेबल तय था उसके अनुसार दिल्ली से वापसी का रिजर्वेशन गांधीजी ने करा रखा था । परंतु इसमें शक था कि ट्रेन के समय तक यह चर्चा पूरी होगी या नहीं होगी ।

सत्ता हस्तांतरण जैसी महत्त्वपूर्ण बातचीत के लिये दिल्ली जाते हुऐ भी महात्मा गांधी स्वयं के किये निर्धारित मालिश के इस काम को नहीं भुले। इतना ही नहीं, दिल्ली पहुँकर उन्होंने लॉर्ड माउन्टबॅटन को कहा कि मुझे इस ट्रेन से वापस वर्धा जाना हैं। इस समय तक चर्चा पूरी हुई तो ठीक हैं। वरना इसे पोस्टपोन करना होगा।

अब सोचने की बात है कि गांधीजी ने अपने एक अनुयायी की मालिश को इतना महत्त्व क्यों दिया? सत्ता पर हावी होने की लालस उन्हें होती तो उनका व्यवहार अलग होता। क्या आज के नेतागण इसी प्रकार व्यवहार करते दिखाई देते हैं।

गांधीजी ने अपना स्वाभाविक कर्तव्य समझकर यह जो कार्य किया उसके पिछे जीवनमूल्य की ही महत्त्वपूर्ण बात है। फोटो खिचवाने और नाम कमाने की भावना इनमें नहीं है। मैंने जो प्रारंभ में जीवनमूल्य के नाते मुहम्मद पैगंबर का नाम लिया था, उनके जीवन में आता है कि मदिना में पहिली बार बडी मसजिद बनाने का जब उपक्रम शुरु हुआ तो उस समय अपने अन्य साथियों के साथ सिरपर पत्थर उठाकर ले जाने का काम स्वयं मुहम्मदसाहब करते थे। उन्होंने यह नहीं सोचा कि मैं नेता हूँ बाकी लोग काम करें, जनरल मॅनेजमेंट और सुपरविजन का काम करूंगा। यदि वह ऐसा करते तो किसी के मन में उनके प्रति नाराजी आ जाती. सो बात भी नहीं थी। लेकिन स्वयं अपने सिर पर बोझा उठाने का काम अन्य लोगोंके साथ उन्होंने किया। जीजस क्राइस्ट के जीवन में अंतिम दिनों की जो घटनाए हैं उसमें आता है कि वह किसी के यहाँ अपने सब शिष्यों के साथ भोजन के लिये गये। उनका यह Last Supper बहुत प्रसिद्ध है। वहाँ जाकर भोजन के लिये बैठे तो एक बात उनके खयाल में आयी कि लिडर के पास पहुँचने कि जरा होड थी। भोजन के समय लीडर के साथ मैं बैठूंगा यह होड थी। इस कारण लिये जैसे सार्वजनिक जीवन में होता है, वैसा दृष्य वहाँ भी उपस्थित हुआ। यांने elbowing out एक दुसरे को खदेडकर सामने घुसना।

यह जब देखा तो उनको दु:ख हुआ । उन्होंने कहा कि भाई सारा हम सब लोग खडे हो जाये । और जिसका मकान था उसे कहा कि पानी की बाल्टी ले आइये, टावेल ले आइयें । और फिर अपने एक एक शिष्य को बुलाया, पानी से उसके पैर स्वयं अपने हाथोंसे धोए, टावेल से अपने हाथ से हर एक के पैर पोंछे और फिर कहा कि आप सबक सीखे कि, यह मैनें क्यो किया ? इसका आपको पता है क्या ? मैने इसलिये किया है कि आप सबक सीख सके कि जिस तरह का प्रेम मै आपके साथ करता हुँ जिस तरह का व्यवहार मै आपके साथ करता हूँ, उसी तरह का प्रेम और व्यवहार आप आपस में रखे ताकि दुनिया पहचान सके कि आप मेरे है ।

प. पू. गुरुजी का अनुभव

तो हम सोचे कि किस तरह का व्यवहार स्वाभाविक रूप से लोगो के द्वारा होता है कि जिनके आदर्श वादी जीवनमूल्य है ।

परमपूजनीय गुरुजी का तो मेरे जीवन का एक छोटासा अनुभव ऐसा है कि जो बताने में मुझे शरम मालूम होती है । मै उनके यहाँ रहता था और लॉ कॉलेज में जाता था । आदते तो बिगड गयी थी कॉलेज लाइफ में सुबह का कॉलेज था । नींचे टट्की जाने के लिये आना और फिर उधर सेही चाय लेकर सीधे कॉलेज चले जाना । बाद में याद आती थी कि अरे अपना बिस्तरा तो वैसे ही फैला रहा । लेकिन वापस आने पर बिस्तरा अपने स्थानपर ठीक से रखा मिलता था । सोचा कि यह बिस्तर फोल्ड करने का काम कौन करता है ? मेरे जैसा एक अन्य साथी भी वहाँ सोता था । मैंने सोचा, वही रोज मेरा इतना काम कर देता है । इसलिये मैंने उससे कहा कि भाई माफ करना मै तुम्हें तकलीफ दे रहा हूँ । हर दिन मेरा बिस्तर तुमको गोल करना पडता है । उसने कहा कि मैंने तो तुम्हारा बिस्तर कभी उठाया नही । फिर मुझे डर हुआ । एक दिन कॉलेज में न जाते हूए मै पिछे से उधर टेरेस पर चला गया । देखता रहा कि मेरे बिस्तर

का होता क्या है । तो उधर से परम पूजनीय गुरूजी आये । वे बिस्तर गोल करके नीचे चले गये । और कभी इस बातका उल्हना तक नहीं दिया कि तुम्हारा यह बर्ताव ठीक नहीं । हमारे इतिहास में नेतृत्व का सबसे अच्छा उदाहरण भगवान श्रीकृष्ण का बताया जाता है । पांडवों को चक्रवर्ती बनाने का काम भगवान श्रीकृष्ण के कारण ही हुआ था । लेकिन जिस समय पांडवों के यहाँ राजसूय यज्ञ हुआ तब की घटना है । इतना बडा समारोह था, उसमे तरह तरह के डिपार्टमेन्टस सम्हालने की आवश्यकता थी । पांडवोंने सबसे पूछा कि भाई, तुम कौनसा डिपार्टमेन्ट देखोंगें ? हर एक ने अपनी अपनी इच्छा का डिपार्टमेन्ट ले लिया । कृष्ण से जब पूछा गया तो उन्होंने कहा, कि भोजन होने के पच्चात जो झूठी पत्तले रहती है, वे झूठी पत्तले उठाने का काम मै करूंगा । यानी चक्रवर्तियों का नेतृत्व करनेवाला पुरुष झूठी पत्तले उठाने का काम स्वयं मांग लेता है । इस तरह का एक आदर्शवादी व्यवहार हम अपने इतिहास में देखते है ।

जीवनमूल्य दो तरह के है । और इसमे हमे यह देखना है कि जो एक बडा विस्तृत ऐसा ध्येय हमने अपने सामने रखा है । उसको यदि प्राप्त करना है शोषणमुक्त समाज निर्माण करना है, तो सामूहिक नेतृत्व के नाते हममें से हर एक का जीवनमूल्य क्या हो ? किसी तरह के नेतृत्व की अपेक्षा बडे काम में हुआ करती है ? संगठन कार्यकर्ता के नाते इसका बारिकी से विचार हममेंसे हर एक को करना चाहिये । जो केवल पोजिशन के कारण बडप्पन मिलता है वह सही बडप्पन नहीं । सही बडप्पन वही है जो पोजिशनपर अवलंबित नही । वह intrinsic worth है । अपनी अन्दर की योग्यता है ।

सही बडप्पन कैसे प्राप्त होता है

सही बडप्पन कैसे प्राप्त हो सकता है, इसके बारें में एक बहुत छोटासा सूत्र अपने यहाँ विष्णुसहस्रनाम में है । विष्णु के उसमे एक हज़ार नाम दिये है, लेकिन एक एक विशेषण गुणवाचक है । उसमें कहाँ

गया, 'अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोक धृत । त्रिलोक धृत यह भगवान के लिये हैं । तीनों लोक जो धारण करते है वह त्रिलोंकधृत है । लोकस्वामी याने जो लोक का नेतृत्व करते हैं । लेकिन वहाँ तक कैसे पहुँचते है । तो कहाँ अमानी मानदों मान्यो । अमानी याने जो स्वयं अपने किये सन्मान की अपेक्षा नही करता । मान दो – जो दुसरों को मान देता है । स्वयं अपने लिये सन्मान की अपेक्षा नही रखता बल्कि दुसरों कासन्मान करता है । फिर तीसरा शद्ब आता हैं मान्यो । जिसके कारण वह सर्व मान्य हो जाता हैं । सर्वमान्य होंने की जो प्रक्रिया है वह इस तरह बतायी है की अमानीं – याने अपने लिये मान की अपेक्षा न रखने वाला । मानदो – याने जों दूसरों को सम्मानित कर रहा हो और इस लिये सर्वमान्य हो रहा हो ।

" अमानी मानदो मान्यों लोकस्वामी त्रिलोकधृत ' .यह प्रक्रिया बनायी हैं । वास्तव में जो सही लोक नेतृत्व हैं वह इसी प्रक्रिया में से आता है । जो स्वयं अपनें कों भूल जाता है । अपना बडप्पन अपना यश अपना संन्मान आदि विचार जिसके मनमें आता हीं नही, बल्कि आदर्श का यश, ध्येय की प्राप्ति का विचार जिसके मन में रहता है जो अहम् कों भूल गया हैं, वही वास्तव में आदर्श नेता है । क्योकि जैसे ईसा ने कहा कि हृदय के सिंहासन पर भगवान और शैतान दोनों एक साथ नही बैठ सकते हैं । वैसे आदर्श और अहम् दोनों एक साथ हृदय के सिंहासन पर बैठ नही सकते । अहम् जितना बडा होगा उतना आदर्शवाद छोटा होगा । आदर्शवाद जितना बडा होगा उतना अहम् छोटा होगा । मानों एक ही सर्कल है जिसे दो कलर दिये है । एक लाल, दूसरा हरा है । सर्कल निश्चित है । सर्कल यदि Constant रहा तो हरे रंग का दायरा बढेगा और लाल का दायरा छोटा होगा । लाल का दायरा बढेगा तो हरे का छोटा होगा । वैसे हमारे हृदय का मन का जो सर्कल है वह Constant है ! उसमे दो कलर एक अहम् है, एक आदर्शवाद है । आदर्शवाद के कलर दायरा बढ़ेगा तो अहम का छोटा होगा । अहम का दायरा बढेगा तो आदर्शवाद का छोटा होगा । और जिसका आदर्शवाद काही दायरा संपूर्ण सर्कल बन गया

वही व्यक्ति वास्तवमे सही लोकनेतृत्व कर सकता हैं । इसके माध्यम से कुछ बड़ा काम हो सकता है ! एक बार धर्मयुगने अलग अलग नेताओं के हस्ताक्षर इकट्ठा किये । हस्ताक्षर के साथ कुछ संदेश मांगे । सबसे छोटा संदेश प. पू. गुरुजी का था । तीन शब्द उसमे थे । " मैं नही, तूही " । जहाँ " मै " का संपूर्ण लोप है केवल ध्येय केवल आदर्श यही संपूर्ण हृदय को, मन को आत्मा को व्याप्त करता है, वहीं सही लोकनेतृत्व प्राप्त हो सकता है । हृदय में दो बातें नहीं रह सकती । "जब मैं था तब हरि नहीं,--अब हरि है मैं नहीं" । प्रेम गली अति साँकरी---जामे दो न समाहीं । हृदय में एक ही समय दो नहीं रह सकते । इस तरह जो स्वयं अपने को भूल जाता है, और इसके कारण फिर नेतागिरी की भावना भी नहीं । 'मैं कोई हूँ' यह बात नहीं । एक विनम्रता है । और इतनी विनम्रता है कि, 'सबसे छोटा मैं हूँ'--यह भावना है । सबकी सेवा करना यह स्वभाव बन जाता है । उस अवस्था में से सही लोकनेतृत्व पैदा होता है । वही व्यक्ति १०, १००, १००० लोगों को इकट्ठा कर सकता है । सबको प्रेरणा दे सकता है । सर्व संग्राहक बन सकता है ।

महासागर: सर्वसंग्राहक-

सबसे सर्वसंग्राहक कौन बन सकता है, इसका बहुत अच्छा उदाहरण कुदरत या प्रकृतिने हमारे सामने रखा है । प्रकृति हमारा एक शिक्षक है । प्रकृतिने हमारे सामने वह उदाहरण रखा है कि ज्यादासे ज्यादा सर्वसंग्राहक, ज्यादा से ज्यादा सर्वसमावेशक कैसे बना जा सकता है । सृष्टिमें इस धरती पर जमीन कम है, पानी ज्यादा है । किसीने मजाकसे कहा है कि, इसे पृथ्वी कहना गलत है, पानी ही कहना चाहिए । पानी ज्यादा है और यह जो पानी है वह अलग अलग लेव्हल से निकलता है, यह तो सबने देखा है । कोई नदी का प्रवाह पूना में बहता होगा । उससे अधिक उँचाई पर सह्याद्रि से निकलने वाला कोई पानी का प्रवाह होगा । उसके भी उपर हिमालय से निकलने वाला कोई प्रवाह होगा । उसके भी उपर कोई प्रवाह होगा जो माउंट एव्हरेस्ट से निकल

रहा है । तो उनकी रिस्पेक्टिव पोजिशन क्या है । पूना में जो जल प्रवाह बह रहा है उससे सह्याद्रि से निकलने वाला जल प्रवाह अधिक ऊँचाई पर, हायर पोजिशन पर । उससे भी अधिक ऊँचाई पर हिमालय के मूल से निकला हुआ, और उससे भी अधिक ऊँची पोजिशन उसकी होगी जो ऐसी किसी उँचाईसे जहाँ कोई ऊँची चोटी होगी, वहाँ से निकला हुआ है अलग अलग पोजिशन से, अलग अलग ऊँचाई से जल प्रवाह निकलते हैं । जो प्रवाह बडी पहाडियों की चोटियों पर से निकलते है उनको पोजिशन से उँची है इसमें कोई संदेह नहीं । लेकिन अंत में क्या होता है ? पहाडी की चोटी पर से भी निकला हुआ जल प्रवाह अब वहाँ नहीं रहेता । प्रकृति ने यह नियम बनाया है कि बह प्रवाह नीचे आता है । नीचे आकर नदी का रूप लेता है । गंगा-जमुना बहती है । वह आखिर में पहुँचकर ही महासागर में मिलती है । महासागर तो सबसे नीचा है । सबसे नीचा होने का मापदंड ही महासागर को माना गया है । यहाँ तक कि जब वैज्ञानिक किसी स्थान की उँचाई कितनी है इसका हिसाब करते हैं, तो कहते हैं कि समुद्र तल से चार हजार फुट ऊपर । समुद्र के सरफेस से तीस हजार फुट ऊपर । मानो सबसे नीचा कोई होगा तो वह महासागर माना जाता है । बडी बडी ऊँचाई पर निर्माण हुए सारे जल प्रवाह भी आखिर शरण महासागर की गोद में लेते हैं । और इसका कारण यही है कि वह सबसे नीचा स्थान रखता है । अपने को सबसे छोटा मानता है । उदार है, सर्वसमावेशक है, विशाल है । बहुत गहराई रखता है । इसलिये इतना पानी उसमें समा सकता है । इतनी गहराई न होती तो इतना पानी समाना संभव नहीं ।

Master Mind Group तयार करें

इस तरह से महासागर है, जो सब से नीचा है और इसी कारण दुनिया भर के सारे जल प्रवाह उसीके अन्दर और अंततोगत्वा उसीकी शरण में आते हैं यह एक अच्छा उदाहरण प्रकृति ने हमारे समाने रखा है । यह लोकनेतृत्व है । इस तरह की अपनी मनकी धारणा यही तो जिस

रूप काम हम करना चाहते हैं वह हो सकता है। आज तो सार्वजनिक जीवन में, राजनैतिक जीवन में, नेताजी की भावना है। इस भावना से जो कुछ काम हो सकता है, वह हुआ है यानी पिछले कुछ वर्षोंमें देशका जो चित्र सामने आया है वह इसी भावना का परिणाम है। यह कल्याणकारी नहीं कहा जा सकता। इससे कुछ अलग चित्र बनाना है, तो उसके लिये अलग जीवनमूल्यों की आवश्यकता है। इस कारण से स्वाभाविक रूप से निर्माण होने वाले अलग व्यवहार की आवश्यकता है। ये बातें हम खयाल में भी रखते हैं उसके अनुसार हम अपने जीवन को ढालते हैं। अपने मन को, हृदय को ढालते हैं। उसके स्वाभाविक परिणामस्वरूप अपना कार्यकर्ताओं का समूह बढ़ सकेगा। मास्टर माइंड ग्रुप हम जगह जगह तैयार कर सकेंगे।

हर लक्षण लड़ाई का क्षण-

हमारा नेतृत्व स्वीकार करनेवालों की संख्या स्वभाविक रूप से बढती रहेगी। जैसे बच्चा बिलकुल कुछ नही जानता हो भी भगवान ने ही बच्चे के मन में इतनी अक्ल दी है कि माँ कौन है इसे वह स्वाभाविक रूप से समझ सकता है। वैसे वास्तव में अपना कौन है और कौन केवल दिखावा करनेवाले हैं, अनपढ भी अंततोगत्वा समझेगा। ज्यादा देर तक किसी को गुमराह करना सम्भव नहीं है। थोडे समय के लिये थोडे लोगों को गुमराह किया जा सकता है। बाकी बाते स्वाभाविक रूप से होगी। हमारे जीवनमूल्य और उसके कारण हमारा मन, हृदय, आत्मा यदि ठीक ढंग का रहा तो बाकी सारी चीजे स्वाभाविक रूप से उपस्थित होंगी। इस दृष्टिसे सामूहिक नेतृत्व करने वाले हम सब लोगों ने अपने अपने कार्यक्षेत्र को ध्यान में रखकर आत्मचिंतन करना चाहिये। हम आत्म निरीक्षण करें, आत्मचिंतन करें। रोमँटिक शब्द का प्रयोग करना हो तो कह सकते हैं कि हम स्वयं अपना संगठन करें। हर एक कार्यकर्ता स्वयं अपना संगठन करें। Self Organisation का विचार अपने सामने

है । यानी एक एक व्यक्ति, एक एक कार्यकर्ता अपना सेल्फ ऑर्ग-नायझेशन करें और इस तरह स्वयं अपना संगठन करने में कार्यकर्ताओं को थोडीसी सहायता हो। स्वयं अपना संगठन बहुत कठिन काम है । अपना शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा इन चारों का बराबर संगठन हो । चारों का तालमेल बराबर हो । यह बहुत कठिन काम है। हम तो सोचते हैं कि भाई, संस्था में तालमेल कैसा रहेगा ? यह शायद इतनी कठिन बात नहीं, जितनी अपने ही जो चार अंग है – शरीर मन, बुद्धी और आत्मा – इन में संगठन करना, तालमेल बराबर बिठाना, सुसंवाद रखना । याने स्वयं अपना ही संगठन करना बहुत कठिन काम है । हर दिन हर एक को अनुभव आता है । जिव्हा कहती है कि रसगुल्ला खाया जाय । बुद्धी कहती है कि बेटा तुम डायबेटिक पेशंट हो, यह अच्छा नही । इसीलिये श्रेष्ठ लोगोंने कहा है कि हमारे लिए तो हर क्षण लडाई का क्षण है । लडाई का मतलब उनकी स्वयं अपने साथ ही लडाई ।

स्वयं अपने साथ संगठन–

Intigrated Personality यह बहुत कठिन काम है । आजकल तो शब्द ही चला है । Personality तो हर एक की होती है, ऐसा उनका कहना है । तो अपना ही स्वयं अपने साथ संगठन करने की प्रक्रिया में कार्यकर्ताओं को थोडी बहुत जितनी सहायता हो सकती है उतनी सहायता करना, इतना ही छोटासा उद्देश लेकर हम सब लोग एकत्रित हुए है । हर एक कार्यकर्ता वैसे भी अपना स्वयं संगठन करने के प्रयत्न में जुटा हुआ रहता ही है । क्योंकि वह ध्येयवादी है, आदर्श-वादी है । अन्य लोगों के समान उसमे बाकी बुराइयाँ है, त्रुटियाँ है ऐसा नहीं । और इसके कारण अपने ध्येय के साथ उसकी एकात्मता है, ध्येय का अखंड चिंतन है । इस कारण वह केवल स्वयं के विषय में विचार करना भी भूल गया है "मैं" "मेरी" आदि बातें उसकी नष्ट हुई है । और ऐसे व्यक्ति यदि है तो फिर स्वाभाविक रूप से अपना

[redacted] आगे कैसे बढाया जाय, यह ज्यादा बताने की आवश्यकता नहीं ? ध्येय अच्छा होते हुए भी कार्यकर्ताओं में ध्येय के प्रति आत्मसमर्पण की भावना न रही तो जिस तरह के दोष पैदा हो सकते हैं उस तरह के दोष पैदा होने की संभावना नही रहती । 'Good cause lost by bad advocacy' आदर्श 'एडव्होकसी' में ऐसा होने की संभावना नही होती और फिर ऐसे व्यक्ति चार लोगों को साथ लेकर भी चल सकते हैं संगठन भी खडा कर सकते हैं – जिसको 'Master Mind Group' कहा है । याने कि ऐसा ग्रुप जिसमें हर एक व्यक्ति के सामने एक ही लक्ष्य है । एक ही ध्येय से सभी प्रेरित है । एक ही पथ के सब राही है । इसी कारण आपस में पूर्ण विश्वास, परस्पर प्रेम भी है । विभिन्न व्यक्ति विभिन्न गुण के वाहक है । और आपस में व्यूहरचना इस ढंग से की गयी हैं कि हर एक के गुण का उपयोग संगठन बनाने के लिये हो । जो त्रुटियाँ होंगी, अवगुण होंगे, दोष होंगे वे फैलने न पाये । उन कमियों की पूर्ति के लिए अन्य लोग अपने गुणोंसे सहायता करें । इसी तरह से 'फ्रंट' की रचना की जाए कि हर एक के अवगुण और त्रुटियाँ पीछे रहे । सब के गुणों को आगे लाया जाय और एक दूसरों की कमियों की पूर्ति एक दुसरे के गुणों के कारण हो सके । इस तरह विभिन्न गुण धारण करने वाले एक दूसरे के साथ टीमवर्क से समान काम कर सकते हैं । सबमें परस्पर विश्वास और स्नेह है । सभी एक ही ध्येय से, आदर्श से प्रेरित है । इस तरह की जो टीम है उसको 'मास्टर माइंड ग्रुप' कहा गया । यही ग्रुप आदर्शनिष्ठ कार्यकर्ता निर्माण कर सकता है । इसी ग्रुप के कारण यद्यपि परिस्थिति कम अधिक हो सकता है, अच्छीबुरी परिस्थितियाँ आ सकती है, फिर भी हर अनुकूल परिस्थिति मे गुणात्मक वृद्धि, प्रतिकूल परिस्थिति मे गुणात्मक वृद्धि, किंतु दोनों परिस्थितियों में अपने कार्य की वृद्धि [redacted] करते जा रहे हैं । हर एक व्यक्ति अपने बारे में आत्मचिंतन करते हुए स्वयं अपने को संगठित करने का कैसा प्रयास करेगा यही सोचा जाय । अन्य लोगों के समान हम ऐसा नहीं सोचते कि

सारी दुनिया को कैसे दुरुस्त करना, इसका विचार पहले किया जाए हम तो यही सोचते हैं कि पहले स्वयं अपने को ठीक कैसे किया जाए ? जो कार्य का साधन है वह ठीक रहेगा तो साध्य की चिंता करने की आवश्यकता नहीं । वह स्वयं ही प्राप्त होगा ।

अच्छे कार्यकर्ता की अवस्था

हमारे एक माननीय अधिकारी थे । वह हमेशा कहते थे की begin with first person, singular यानी कार्य का प्रारंभ स्वय से करो । अपना संगठन यदि हम ठीक करें अपनी ध्येयनिष्ठा ठीक रखें तो बाकी सब बातें ठीक हो सकती है । मास्टर माइन्ड ग्रुप बराबर बन सकता है । एक दूसरे के साथ तालमेल बराबर बैठ सकता है । आपने नाम सुना होगा– नील आर्म स्ट्रॉंग, जिन्होंने चंद्रमापर सर्वप्रथम पदार्पण किया । उनके कार्यक्रम का नाम 'अपोलो प्रोग्रॅम' ऐसा था । उनका बडा अभिनंदन हुआ । अपने डॉ. विक्रम साराभाई ने उन से प्रश्न किया कियां कि, भाई इतना बडा काम आप कैसे कर सके ? तो आर्मस्ट्रांग ने साराभाई को जवाब दिया कि, एक तो हम निश्चित रूप से जानते थे कि हमारा लक्ष्य क्या है, और दूसरा हमारे अपोलो प्रोग्रॅम की टीम में जितने लोग थे उनमें से हर एक को पता था कि कुल मिलाकर प्रोग्रॅम क्या है ? लक्ष्य क्या है ? और उस लक्ष्य प्राप्ति की दृष्टिसे कौन कौन सी भूमिका निभाना है ? हर एक को बिलकुल ठीक निश्चित पता था, इसी कारण हम लोक सफल हो सके । मैं समझता हूँ, इस तरह की अवस्था अच्छे कार्यकर्ता की हो सकती है । स्वय हम संगठित रहे (Self Organised) तो बाकी बातें स्वाभाविक रूप से उत्क्रांत होगी । जैसे केमिकल एक्शन में होता है । स्वामी विवेकानंदजीने कहा कि Ours is to put chemical together, crystalisation will follow by the law of nature, वैसे हम स्वयं अपने को दुरुस्त रख सके तो दुनिया को दुरुस्त करने का कार्यक्रम बराबर हो सकता है । जिनके सामने एक निश्चित लक्ष्य है, जो ध्येय के लिए आत्मसमर्पित है, ऐसा लोग यदि

Self, Organised है तो अच्छी और बुरी दोनों परिस्थितियों में समान हिम्मत से, समान साहस से, समान उत्साह से काम कर सकते हैं। जिसको ध्येयदर्शन नहीं वे काम नहीं कर सकते। वे बीचमें ही कही छोड जाएँगे। कहीं आपत्ति आयी, प्रलोभन मिला तो छोड जाएँगे। देवताओं ने जब समुद्र मंथन किया तो उसके बारे में कहा गया है कि,

रत्नै: महार्है: स्तुतुषु: न देवा:।
न भेजि रे भीम विषण भीतिम्।
सुधां विनान प्रभयुर्विराम।
न निश्चितार्थात् विरमंति धीर:।

अमृत निकालना था। परंतु इसके बीच समुद्र ने तरह तरह के रत्नदिए, ताकि ये रत्न पाने के कारण खुश हो जाएँगे और अगला प्रोग्रॅम छोड देंगे। किंतु रत्न प्राप्त होने के पश्चात् भी वे अपने ध्येय को भूल नहीं गये। उन्होंने मंथन जारी रखा। समुद्र ने सोचा कि ये प्रलोभन के कारण वश नहीं होते, तो भीषण कालकूट जैसा विष, वह बाहर फेंका। लेकिन उसके कारण भी वे डरें नहीं। मंथन कार्यक्रम तब तक जारी रखा जब तक अमृत प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए कहा कि, न निश्चितार्थात् विरमंति धीर:। ऐसे लोग अपने ध्येय से विचलित नहीं होते। न प्रलोभन के कारण, न भय के कारण। इस तरह का धैर्य जिसको धर्मधैर्य कहा जाय, आदर्शवादी व्यक्तियों में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होता है। इसके लिये अलग कोशिश करने की आवश्यकता नहीं होती जो सामाजिक राष्ट्रीय ध्येय के लिए काम कर रहे हैं उनकी तो बात ही क्या? अन्य क्षेत्रों में भी निश्चित ध्येय, ध्येय के साथ तादात्म्य है, एकात्मता है और स्वयं अपना आयडेन्टिफिकेशन है तो व्यक्ति बहुत धीरज रख सकता है। अन्यथा बाकी लोगोंका धीरज टूट जाता है। कोलंबसने ध्येय सामने रखा। ध्येयके साथ एकात्मता थी, कि पश्चिम-दिशामें समुद्रमें आगे और आगे ही बढ जाऊँगा। वहाँ जमीन मिलेगी। यह पूरा विश्वास था। इस विश्वास के साथ

अपना जहाज लेकर आगे बढा । अब सबके मन में यह ध्येयदर्शन नहीं था, एकात्मता नहीं थी । इस कारण धीरज नहीं था । सप्ताह के पश्चात् सप्ताह बीत गया, महीने बीत गये, कहीं जमीन दिखाई नहीं देती थी । निराशा ही निराशा छाने लगी । उपर नीला आकाश, नीचे नीला पानी। जीवमान सृष्टि का कोई लक्षण इधर उधर नहीं दिखाई देता था । इधर जो खानेपीने की सामग्री थी वह भी समाप्त होने लगी थी । पता नहीं कि जमीन लगेगी या नहीं लगेगी । इस तरह का संदेह लोगोंको होने लगा । वे बेचैन हो गये । कोलंबस से कहने लगे कि अब वापस ही जाएँगे । पता नहीं आगे कुछ मिलेगा । या नहीं मिलेगा फिर भी ध्येय दर्शन किया हुआ, ध्येय के साथ एकात्म ऐसा व्यक्ति था जो बिलकुल विचलित नहीं हुआ । वह लोगों का साहस बढाने की कोशिश करता था । होते होते समय आ गया कि वह अमरीका पहुँच गया । नई भूमि पर पहुँच गया ।

ऐतिहासिक परिवर्तन कौन ला सकता है ?

जो ध्येय के साथ एकात्म नहीं है उनका धीरज जल्दी टूटता है । लेकिन ध्येय के साथ जिनका आत्मसमर्पण है वे बहुत धीरज रख सकते हैं, सालों तक जूट सकते हैं । अपनी सारी उमर इस तरह के संग्राम में वे बिता सकते हैं । सभी जो गुण हैं वे ध्येय के साथ एकात्मता होने से उत्पन्न होते हैं । ऐसे व्यक्ति यह भी चिन्ता नहीं करते कि जनता हमारे साथ है या नहीं । क्योंकि विश्व में जब कोई ऐतिहासिक परिवर्तन हुआ तो वह कुछ गिने चूने लोगों ने अपने आत्म विश्वास से ही कर दिखाया । लेनिन ने इसे determined minority कहा है । आज तक इतिहास में determined minority ही परिवर्तन लाने में सफल हुई है । डिटरमिन्ड मायनॉरिटी ऐतिहासिक परिवर्तन लाती है ऐसा उनका कहना है । और यह दिखाता है कि यशापयश जो है वह केवल संख्या बल पर अवलंबित नहीं है । कार्यकर्ता की आदर्श निष्ठा पर निश्चय पर, धीरज पर, साहस पर अवलंबित है । इतिहास में तो ऐसे कितने ही उदाहरण है कि बहुत थोडे लोगों ने संघर्ष करते हुए अपनी इच्छा के अनुकूल परिवर्तन ऐतिहासिक क्रम में ला दिए है । ऐसे कितने ही उदाहरण है, आप सब

...ग ...ते हैं । इस तरह के ऐतिहासिक परिवर्तन लाने की क्षमता ...ने वाले आदर्शनिष्ठ लोग साथ होना ही जरूरी है ।

...ह असीम शक्ति कैसे आती है ?

व्यक्ति जब 'अहं' को भूल जाता है, स्वयं को ध्येय में विलीन कर देता है तब उसकी शक्ति असीम होती है । अगर व्यक्ति सेल्फ कॉन्शस हो और अपने अहं को लेकर चल रहा हो तो उसकी शक्ति सीमित होती है । उसकी अपनी शक्ति ही काम आती है । परंतु जब व्यक्ति अहंकार को त्याग कर स्वयं को कार्य में विलीन कर देता है, तो ध्येय की जो intensic strength है, जो आंतरिक शक्ति है, आदर्श की शक्ति है, उसका वह वाहक बन जाता है । इस कारण असीम शक्ति का वाहक बनता है । जैसे बिजली का बल्ब है, फ्यूज हो गया यानी पॉवर हाऊस से संबंध कट गया तो वह प्रकाश नहीं दे सकता । यदि बल्ब फ्यूज नहीं है तो वह पॉवर हाऊस की शक्ति का वाहक है । बल्ब की Candle Power जितनी बढाना चाहे बढ सकती है । आत्मसमर्पण के कारण व्यावहारिक दुनिया में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं । जब थोडे लोग बहुत विशाल परिवर्तन लाते हैं तो लोगों को आश्चर्य होता है कि इतनी शक्ति इनके अंदर कैसे आयी ? ये साहस कैसे कर सके ? लोग कहते हैं, जिनके कार्यों को पागलपन की दृष्टि से देखा जाता था, उन्होंने इस तरह का साहस किया है । ऐसे कितने ही उदाहरण इतिहास में हैं । उनके अंदर यह शक्ति कैसे आयी, यह हिम्मत कैसे आयी ?

बाजी प्रभु का उदाहरण-

श्री छत्रपती शिवाजी महाराज के इतिहास में एक घटना बाजी प्रभु देशपांडे के बारे में है । पूरी बताने की आवश्यकता नहीं । शिवाजी का पीछा करने वाली शत्रु सेना बहुत थी, ... ऐसा था कि यदि शिवाजी उस समय उनके हाथ में आ जाते तो ...राज्य वहीं समाप्त होता । शिवाजी के साथ सेना भी इतनी नहीं थी कि शत्रू से लडकर परास्त कर सकें । क्या किया जाय, यह उस परिस्थिति में सोचा गया । एक छोटीसी घाटी (Pass) थी । उसमें से

गुजरना था। सोचा गया कि शिवाजी कुछ सैनिकों के साथ आगे बढ़े और पीछा करने वाली शत्रुसेना को अपने गिने चुने साथी सैनिकों की हिम्मत पर बाजीप्रभू इस घाटी में रोकें। जानते थे कि ज्यादा देर तक रोकना संभव नहीं। जो इस कार्य के लिये खडे होंगे उन सभी को मरना पडेगा। किंतु जब तक शिवाजी महाराज सुरक्षित विशालगढ नहीं पहुँचते तब तक आखिरी आदमी मरने दम तक शत्रु से जूझेगा और उन्हें घाटी पार नहीं करने देगा, ऐसा तय हुआ। वास्तव में यह प्रसंग ऐसा था कि हिंदवी स्वराज्य का स्वप्न वहीं खत्म हो जाता। वीर बाजी प्रभु थोडेसे लोगों को लेकर वहाँ रुक गये और लड़ते रहे। सबको पता था कि यहाँ अपनी मृत्यु होगी। एक एक साथीधाराशायी होने लगा फिर भी अंतिम साँस तक लडते रहे। कहते हैं, जो घायल हो गये वे भी बचे हुए लोगोंको उत्साह दे रहे थे। यह तय हुआ था कि, शिवाजी विशालगढ़ पहुँचते ही तोपों की आवाजें होगी। वह एक संकेत था कि वे पहुँच गये। इसलिये घाटी में लडनेवाला हर सैनिक तोपों की आवाज की ओर कान लगाये था, और तब तक घायल होने के बाद भी मरने को तैयार नहीं था। स्वयं बाजी प्रभु लोहूलुहान थे। परन्तु उनका शरीर भी तभी गिरा जब विशालगढ़ पर शिवाजी के पहुँचने की सूचना देनेवालीं तोपें सुनाई दी। यदि उस समय यह साहस का काम थोडे लोग न करते तो हिंदवी स्वराज्य का सपना वहीं खत्म होता। थोडे लोगोंने इतिहास में परिवर्तन ला दिया।

हेटेशियस का पराक्रम-

रोमके इतिहासमें एक बार ऐसा प्रसंग आता है कि रोमपर हमला हुआ। हमला करनेवाली सेना बहुत बडी थी। रोम की सेना उसका मुकाबला नहीं कर सकी। अब क्या किया जाय? वहाँ टायबर नदी बहती है। तो उन्होंने सोचा कि किसी भी हालत में शत्रुओं को टायबर पार नहीं करने देंगे। अब प्रश्न था कि शत्रुओं को रोकेगा कौन? क्यों कि कुल मिलाकर उनके पास सिपाही ज्यादा नहीं थे। टायबर नदी का जो पुल था उस पर से शत्रुसेना पार कर सकती थी। सोचा गया कि

पुल उड़ाया जाय। लेकिन उसे तोडने में समय लगेगा। शत्रुसेना तो नजदीक पहुँच गयी थी। तब तक पुल उडाने की व्यवस्थों में ही शत्रुसेना पुल पार कर जायेगी। इसलिये तय हुआ कि जब तक ब्रिज तोडा नहीं जाता, शत्रुओं को पुल के उस पार ही रोक रखा जाये। यह काम तीन वीर पुरुषों को सौंपा गया। नेतृत्व ऱ्हेटॅशियस कर रहा था। यह ईसा पूर्व ४८८ कीं घटना है। ऱ्हेटॅशियस बडा ही वीरपुरुष था। अब हम कल्पना कर सकते हैं कि इतनी बडी संख्या में शत्रुसेना और ये तीनों ही उनको रोक रहे हैं। उनमें से एक की मृत्यु हो गयी दुसरे की भी मृत्यु हो गयी। अकेला ऱ्हेटॅशियस लड़ता रहा लेकिन जब तक ब्रिज नहीं टूटा और विश्वास नहीं हो गया कि अब किसी भी हालत में शत्रु सेना रोम में प्रवेश नहीं कर पायेंगी, तब तक वह लड़ता रहा। इस तरह तीन लोगों के पराक्रम के कारण 'रोम' का विध्वंस उस समय बच गया। वरना इतिहास में परिवर्तन आ जाता। रोमन साम्राज्य वहीं नष्ट हो जाता। संख्या थोडी हो फिर भी पक्के ध्येयवादी और उस कारण निश्चय पर अटल रहने वाले हो, तो थोडे लोग भी इतिहास को मोड़ दे सकते हैं, घटनाक्रम बदल सकते हैं। इसी कारण ऐसे व्यक्ति अपने अंदर महान् शक्ति का अनुभव करते हैं। उनको नहीं लगता कि हम अकेले हैं, थोडे हैं, हम से यह कैसे होगा? उन्हें यह विश्बास रहता है कि हम विजयी होनेवाले है। हमारा ध्येय ठीक है। हमें कौन परास्त कर संकता है?

फ्रान्सकी भी एक प्रसिद्ध घटना हैं जिस समय फ्रान्सके सभी लोग हार मान बैठे थे, सेनापति और मार्शल फाँक पराभूत नहीं हुए। प्रेस संवाद-दाताओं नें उनसे पूछा कि तुम्हारे उन्नीस अँडज्युटँटस थे वे सब परास्त हुए, फिर भी तुम कैसे विजयी हुए? इस वीर ने सीधा इतनाही जबाब दिया कि भाई, इसका एक ही कारण दिखता है कि "I was simply determined not to be defeated," मैंने केवल निश्चय किया था कि मैं पराजित होनेवाला ही नहीं। इसलिए मैं विजयी हुआ। इसमें आश्चर्य की क्या बात है? उनको तो आश्चर्य की बात नही लगी;

लेकिन सामान्यजनों को वह आश्चर्य की बात हो सकती है। Lipzig की लडाई में नेपोलियन के पास उनके असिस्टंटस पहुँचे और बडी चितावाली खबर बताई कि शत्रु की सेना की संख्या हमारी सेना से तीन गुना है। नैपोलियने जवाब दिया, फिर उसमें चिता की क्या बात है? तुम्हारी भी उतनी संख्या है। उनकी संख्या ५०,००० थी और शत्रु की १,५०,००० थी। तो नेपोलियन मैं कहा कि, देखिए आपके पास कितनी सेना है? बोले, ५०,०००, तो नेपोलियन बोले मैं १,५०,००० हूँ। इस तरह २,००,००० तो तुम्हारे ही हो गये। अब जो लडाई के मैदान में हिम्मत के साथ और आसानी से यह कह सकता है तो उसके पान कितना प्रचंड आत्मविश्वास होगा, इसका विचार हम लोग कर सकते हैं।

दृढ संकल्प की आवश्यकता–

आत्मविश्वास कैसे निर्माण होता है? आत्मसमर्पण के कारण यहाँ छोटा बडा यह भावना नहीं है। इस तरह के हम कार्यकर्ता हैं। फिर आज तो इतनी निराशा के साथ सोचने की आवश्यकता नहीं। We are prepared for the worst ये तो बात ठीक है, लेकिन ऐसी तो बिलकुल आवश्यकता नहीं। क्योंकि पिछले कई दशकों से हिंदुस्थान की राष्ट्रवादी शक्ति हर क्षेत्र में प्रगति कर रही है। अन्य लोगों को चिता उत्पन्न हो, इतनी तेजी से प्रगति हो रही है। जब इतनी शक्ति नहीं थी तब भी किसीने यह नहीं सोचा कि चिता की बात है। अपनी मस्तीमें काम करते जा रहे थे। ध्येयके प्रति अविचल निष्ठा ही हमारी स्वाभाविक प्रकृति बन चुकी है। इसी ध्येयनिष्ठा, एकात्मता, आत्मसमर्पण को हम हिफाजतके साथ कायम रखे तो बाकी सब ठीक हो जायेगा। Every thing will take care of itself स्वयं हम अपनी फिक्र करें इतनी ही बात है स्वयं अपनी चिंता करने में हम; दूसरे की थोडी सहायता करें, हमें चिंता करनी पडती है, बल्कि चिंता करनी पडती है। स्वयं अपनी भी। क्योंकि मनुष्य का मन बहुत चंचल है। थोडे पर ठीक

सें कस कर सवारी नहीं करते तो घोडा आपको कब उछाल कर फेंक देगा, कुछ कहा नहीं जा सकता। उसे हमेशा नियंत्रण में रखने की आवश्यकता है। इसी दृष्टि से यह आवश्यक हो जाता है कि बाहर की परिस्थिति को देखते हुए, अन्य लोगों का जीवन देखते हुए उसके बुरे परिणाम हम अपने मन पर न होने दें, और अपने जो अच्छे संस्कार हैं उन्हें हम कायम रखें। इस दृष्टि से एक संकल्प करने की बहुत आवश्यकता है। संकल्प में शक्ति है। मनुष्य के मन में तरह तरह की त्रुटियाँ, कमजोरियाँ जरूर आ सकती है। लेकिन हम त्रुटियों को नहीं आने देंगे। गलतियाँ नहीं होने देंगे। कमजोरियाँ नहीं आने देंगे। ऐसा दृढनिश्चय, संकल्प यदि हम करते हैं, तो कहा जाता है कि संकल्प का दाता भगवान होता है। इस समय हम में से हर एक को इस तरह का दृढ संकल्प निश्चय, प्रतिज्ञा करने की आवश्यकता है।

कठिनाई और अवसर एकही सिक्के के दो पहलू-

इंग्लंड की भूमि पर आक्रमण करने के लिए विल्यम The Conquerer आए। हॉलंड से सेना लेकर आए। वे जैसे ही आए और समुद्र से बाहर जमीन पर पाँव रखा, पहला ही कदम रखा तो अपशकुन हुआ। हुआ यह कि जैसे उन्होंने कूद लगाई तो पैर फिसल गया। एक हाथ के बलपर उन्होंने अपने को सँभाला। एकदम कानाफूसी होने लगीं, आपस में लोग चर्चा करने लगे। उन्होंने भी भाप लिया कि लोग इसे अपशकुन समझ रहे हैं। इस कारण मनोबल कमजोर होगा। तब उन्होंने खडे होकर कहा, कि, भाई, सामने वह जो पहाडी है, उसकी चोटी के पास हम लोग पहुँच जाएँगे और वहाँ मैं बात करना चाहता हूँ सब आगे मार्च करेंगे। इधर उन्होंने कुछ अपने विश्वस्त लोगों को रख दिया और कहा कि जिन जहाजों से हम लोग आए हैं उन सब जहाजों में आग लगा दो। ऐसा कह कर अपने अन्य सिपाहियों के साथ मोर्चे करते हुए विल्यम पहाडी की चोटी के पास पहुँचे। सिपाहियों की पीठ समुद्र की तरफ थी। विल्यम देख रहे थे, उनका मुंह समुद्र की तरफ था। अब हारजीत को

देखने का ढंग होता है । पहली बात विल्यम ने कहीं कि यहाँ भगवान ने आते ही हमें बड़ा आशीर्वाद दिया । जैसे ही मैंने यहाँ कदम रखा तो मेरी हस्तमुद्रा इस भूमि पर लग गयी । भगवान की बडी कृपा हुई । आखिर कठिनाई और अवसर ये दोनों अलग अलग बातें --एक ही सिक्के के दो पहलू हैं । प्रश्न यह है कि देखनेवाला उसे किस प्रकार देखता है । कमजोर हैं, वह हिम्मत हार बैठता है । ऐसे कठिन प्रसंगों में ही नयी आशा के फूल खिलते नजर आते हैं ।

विजय के विना दूसरा पर्याय नही-

इसलिये विल्यम ने कहा कि मेरी हस्तमुद्रा पहला कदम रखते ही इस भूमिपर हुई। तो हमारा विजय निश्चित है । फिर दूसरी बात कही कि, अब पिछे देखिए । कि सबने पीछे देखा तो वहाँ ज्वालाएँ ऊपर जा रही थी । सारे जहाज जल रहे थे । तो सेना में एक बेचैनी फैल गयी । विल्यम The Conquerer ने कहा कि आप देखिए, कि जिन जहाजोंमें से हम आये हैं वे सारे जहाज जलाएँ जा रहे हैं, और वापिस जाने के लिए कोई रास्ता नहीं है । अब हमें इस भूमि पर रहना है । आप यहाँ से वापिस नहीं जा सकते । तो हम बहादुरीके साथ यहाँ लडेंगे, विजय प्राप्त करेंगे, अथवा यहाँ हमारी मृत्यु होगी । वापिस जाना अब असंभव है । लोगों ने यह तय कर लिया कि कोई दूसरा alternative नहीं है । अब लडना ही है । पूरी ताकत और बहादुरी के साथ लडेंगे । उन्होंने विजय प्राप्त की । इंग्लैंड को जीत लिया ।

सिंहगढ की लड़ाई-

अपने इतिहास में भी सिंहगढ़ विजय की घटना ऐसी ही है । रस्सियों के सहारे सैनिक किले में पहुँच गये थे । रात्रि में घमासान युद्ध हुआ और तानाजी मालुसरे की मृत्यु हुई उस समय घबराकर कुछ सैनिक रस्सियों की ओर भागे । परन्तु शेलार मामाने ललकार कर सैनिकों को कहा कि रस्से पहले ही काटे जा चुके हैं । शत्रुओं पर विजय

हासिल करने अलावा अब यहाँ से भाग पड़ने का कोई रास्ता नहीं है। जीतना है या मरना है। यह जब सुन लिया तब जिनके मन में कमजोरी आयी थी वे सब वापिस आ गए। उन्होंने बहादुरी का परिचय दिया। किला उन्होंने जीत लिया। उन्होंने लडाई जीत ली।

ध्येय के प्रति आत्मार्पण का संकल्प करें-

इन उदाहरणों से कहने और समझने की बात केवल इतनी है कि कठिनाई और अवसर एक ही स्थिति के दो नाम हैं। कौनसा पहलू हम स्वीकार करते हैं उस पर ही सब कुछ निर्भर है। दोनों उदाहरणों में यही साफ होता है कि जो कायरता दिखा रहे थे वे ही बहादुरी की चोटी पर जा पहुँचे। हमारे लिये सोचने की बात केवल इतनी है कि इन उदाहरणों में जहाजों को आग लगाने वाला बिल्यम द कॉन्करर था और रस्सियाँ काटने वाला शेलारमामा था। यह काम सेना ने नहीं किया। लेकिन जो हम कार्यकर्ता हैं, हमें अपनी रस्सियाँ काटने का काम स्वयं अपने जहाज जलाने का काम स्वयं करना होगा। स्वयं अपने ब्रिज या पूल तोडना, स्वयं अपनी रस्सियाँ काटना इसी को कहते हैं—संकल्प करना, प्रतिज्ञा करना। यदि Self Organisation की दृष्टिसे स्वयं अपना ही अपने साथ बराबर सुसंवाद हो, संगठन हो, इस हेतु से हम ध्येय के प्रति आत्मसमर्पण की प्रतिज्ञा और संकल्प यहाँ से लेकर चलें तो अपने अपने स्थान पर वापिस जाते समय आगे क्या होगा क्या न होगा इसकी बिल्कुल चिता करने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

CONSUMER

A

SOVEREIGN.

WITHOUT

SOVEREIGNTY

By : D. B. Thengadi

Price – Rs. 20/-

Published By :— **Rajabhau Pophali**, Nagpur.

Distributor :— **J. R. Bhat**

Contact : **B. M. S. Office, New Delhi.**